Volume: 2 Issue: 12 Pages: 06-09

खानदेश विभाग (महाराष्ट्र) में घन वन संवर्धन की मियावाकी पद्धति की उपयोगिता

[1] गणेश पाचकोरे और [*2]दत्ता ढाले

[1] सहयोगी प्राध्यापक, वसंतदादा पाटिल टील आर्ट्स, कॉमर्स और साइंस कॉलेज, पाटोदा जिला बीड, महाराष्ट्र, भारत ।

[*2]सहयोगी प्राध्यापक, वनस्पतिशास्त्र विभाग, एसएसवीपीएस, कै. क. डॉ. पा.रा. घोगरे साइंस कॉलेज, धुले, महाराष्ट्र, भारत ।

Article Info.
E-ISSN: 2583-6528
Impact Factor (SJIF): 5.231
Peer Reviewed Journal
Available online:
www.alladvancejournal.com

Received: 22/Nov/2023
Accepted: 11/Dec/2023

***Corresponding Author**
दत्ता ढाले
सहयोगी प्राध्यापक, वनस्पतिशास्त्र विभाग, एसएसवीपीएस, कै. क. डॉ. पा.रा. घोगरे साइंस कॉलेज, धुले, महाराष्ट्र, भारत ।

सारांश:
मियावाकी पद्धति (Miyawaki Method) वृक्षारोपण की एक जापानी विधि है । इसका प्रतिपादन प्रसिद्ध जापानी वनस्पतिशास्त्र (Botanist) अकीरा मियावाकी (Akira Miyawaki) ने किया था। यह कार्यविधि 1970 के दशक में विकसित की गई थी, जिसका मूल उद्देश्य भूमि के एक छोटे से टुकड़े के भीतर हरित आवरण को सघन बनाना था। घरों के आस – पास खाली पड़े स्थान (Backyards) को छोटे बगानों या जंगलों में बदला जा सकता है। इस पद्धति में पौधों को एक दूसरे से कम दूरी पर लगाया जाता है। पौधे सूर्य का प्रकाश प्राप्त कर ऊपर की ओर वृद्धि करते हैं, किंतु सघनता के कारण नीचे उगने वाले खरपतवार को प्रकाश नहीं मिल पाता है। यह पौधों की वृद्धि के लिए अच्छा है। इस पद्धति के अनुसार पौधों की तीन प्रजातियों की सूची तैयार की जाती है, जिनकी ऊंचाई अलग-अलग हो। इसका कारण यह है कि वे एक - दूसरे से कम से कम प्रतियोगिता करें। आमतौर पर जंगलों को पारंपरिक विधि से उगने में कम से कम 100 वर्ष का समय लगता है, जबकि मियावाकी पद्धति से उन्हें केवल 20 से 30 वर्षों में ही उगाया जा सकता है।

मुख्ये शब्द: मियावाकी पद्धति, खानदेश विभाग, घन वन संवर्धन

परिचय

जापानी वनस्पतिशास्त्री अकीरा मियावाकी ने देशी पौधों के साथ घने जंगल बनाने के लिए मियावाकी तकनीक का प्रतिपादन किया था। किसी खाली पड़े स्थान में जंगल उगाकर शहरी वनीकरण के लिए इस अनूठी विधि का प्रयोग बाद में दुनिया भर में किया जाने लगा। मियावाकी वनीकरण विधि की विशेषता यह है की इसके लिए काफी कम जगह की आवश्यकता होती है। यह प्रकिया कम से कम 20 वर्ग फुट के छोटे से स्थान में भी अपनाई जा सकती है। खाली स्थान और सघन पौधों की वृद्धि को बचाने के लिए पौधों को बहुत करीब से बोना चाहिए। यह पौधों को एक दूसरे की रक्षा करने और सूरज की रोशनी को जंगल की जमीन तक पहुँचने से रोकने में कारगर है, जिससे परजीवी पौधों व खरपतवार की वृद्धि को नियंत्रित किया जा सके। इस प्रक्रिया में पौधों की वृद्धि 10 गुना अधिक तेजी से होती है, और वनस्पति सामान्य से 30 गुना अधिक सघन पाए जाते हैं। मियावाकी पद्धति के अनुसार, ऐसे जंगल को कम से कम 3 साल तक विशेष देख - भाल की आवश्यकता होती है, उसके बाद यह पारितंत्र आत्मनिर्भर हो जाता है।

मियावाकी पद्धति में ऐसा किया जाता है पौधारोपण

मियावाकी पद्धति में प्रति वर्गमीटर में 3 से 5 पौधे लगाते हैं. पौधों की ऊंचाई 60 से 80 सेंटीमीटर होनी चाहिए। इसमें स्थानीय स्तर पर उपलब्ध प्रजातियों के 40 से 50 फीसद पौधे लगाते हैं। उसके बाद सामान्य नेटिव प्रजातियों के 50-40 फीसद पौधे लगाते हैं।

मियावाकी पद्धति की प्रक्रिया (Steps)

मियावाकी पद्धति का पालन बिल्कुल वैज्ञानिक ढंग से किया जाता है जिसमें प्रक्रियाएं चरणबद्ध तरीके से फ़ॉलो की जाती हैं। ये चरण (steps) इस प्रकार हैं:

चरण 1: मिट्टी के संघटन की जांच!

मियावाकी पद्धति में सबसे पहले मिट्टी के संघटन की जांच की जाती है और बायोमास को मापा जाता है। मिट्टी की बनावट की जांच आवश्यक है क्योंकि यह उर्वरता, जल प्रतिधारण, अंतःस्रवण आदि को निर्धारित करने में मदद करती है। ये सभी तत्व जंगल की वृद्धि और उसकी धारणीयता को निर्धारित करते हैं । कुछ महत्वपूर्ण घटक निम्नलिखित हैं:

जैविक खाद – जमीन को पौधों की वृद्धि के लिए पोषक तत्व प्रदान करने के लिए उर्वरक की आवश्यकता होती है। कुछ जैव उर्वरक गोबर खाद, बकरी का मलवा और वर्मी- कम्पोस्ट आदि हैं।

वेधन सामग्री – ये सामग्री पौधों को अपनी जड़ों को जमीन में गहराई तक ले जाने में सहायक होती हैं। वेधन को बढ़ाने के लिए चावल की भूसी, गेहूं की भूसी, या मूंगफली के गोले एक उत्कृष्ट संसाधन हो सकते हैं।

जल धारक (वाटर रिटेनर्स) – एक जंगल को विकसित करने के लिए एक जमीन में महत्वपूर्ण जल प्रतिधारण शक्ति होनी चाहिए । मिट्टी की जल प्रतिधारण शक्ति को मजबूत करने के लिए वनीकरण में नारियल के रेशे और पीट मिलाया जा सकता है।

मल्च – इसे आमतौर पर अत्यधिक धूप से बचाने के लिए जमीन पर बिछाया जाता है। यह विशेष रूप से पौधों के लिए महत्वपूर्ण है, क्योंकि सूखी मिट्टी में उनकी वृद्धि प्रभावित हो सकती है। यह मिट्टी में नमी के संतुलन को बनाए रखने के साथ साथ खरपतवार की वृद्धि को भी नियंत्रित करती है। वनों में सड़े हुए पत्ते, सूखी छाल, या यहाँ तक कि कम्पोस्ट का उपयोग भी इस हेतु किया जा सकता है।

चरण 2: वृक्षारोपण के लिए मूल प्रजाति का चयन!

वनीकरण के लिए देशी पौधों की प्रजातियों का चयन एवं उनके जीनस (पर्णपाती या सदाबहार), ऊंचाई और प्रकृति पर प्रभाव की पहचान मियावाकी पद्धति का अगला कदम है। उपरोक्त सभी कारकों के आधार पर, वृक्षारोपण करने वालों को उन पौधों को परतों में आवंटित कर देना चाहिए। पेड़ों की कुल संख्या का 40 से 50 प्रति शत आस पास के क्षेत्र में सबसे अधिक पाई जाने वाली प्रजातियों में शामिल होना चाहिए । वृक्षारोपण करने वालों को कम से कम 3 से 5 अलग- अलग प्रजातियों का चयन करना चाहिए जो कि उस जंगल की मुख्य प्रजातियाँ होंगी। कुछ कम सामान्य रूप से पाई जाने वाली देशी प्रजातियाँ सहायक पौधों के रूप में 25 से 40 प्रति शत तक हो सकती हैं। अंत में, कुछ अन्य छोटी प्रजातियाँ शेष वन का निर्माण करेंगी। वृक्षारोपण करने वालों को इन प्रजातियों के पौधे एकत्र करने की आवश्यकता है, जो न्यूनतम 60 से 80 से.मी. की ऊंचाई में होने चाहिए। खानदेश के लिए कुछ उदाहरण इस प्रकार दिए जा सकते हैं,

बडे पेड

सीताअशोक, बकुळ, खैर, हिरडा, बेहडा, आवळा, नरक्या, कवट, पांढरा कुडा, आरणा, धावडा, काटेसावर, बाभूळ, बिलावा, चारोळी, टेंभुर्णी, गेळफळ, चंदन, हदगा, आपटा, उंबर, आईन, करंज, महारुख, बकांनिम, बेल, बहावा, पळस, कांचन, जांभूळ, कडुलिंब, पिंपळ, बोर, वड, आंबा, कांडोळ, गेळफळ, मोह, अंकोल, मेंढासिंगी, शिरीष, भोकर, सिसम, चिंच, कदंब, पांगरा, अंजन, रिठा, टेंभुर्णी, टेंटू, शमी, पुत्रांजीवी, साल, खैर, महारुख, तुपा, सोनचाफा, सालई, इत्यादी. (क्षीरसागर और पाटिल 2008; पाटिल, 2003; जैन, 2007)

झाड़ीदार पौधे:

भारंबी, जीतसाया, मुरुडशेंग, निरगुडी, अडुळसा, आमटी, डिकेमाली, धायटी, सोनामुखी, सप्तरंगी, वाकेरी, शेंद्री, चित्रक, ओसाडी, सुरण, एरंड, इत्यादी

पर्वतारोही पौधे:

शतावरी, कळलावी, विदारी कंद, मुंगूसवेल, शिवलिंगी, समुद्रशोक, पिंपळी, अनंतमूळ, गुंज, मंजिष्ठा, खाजकुहिली, उतरण, इत्यादी

जलप्रेमी पौधे:

सफेद, मुसळी, काळी मुसळी, माका, तालीमखाना, वेखंड, आळू, कमळ, मंडूकपर्णी, ब्राह्मी, जेष्ठमध, पुदिना, वाळा, नागरमोथा, इत्यादी

तन/ छोटी हर्ब:

पुनर्नवा, शंखपुष्पी, बाकुची, अश्वगंधा, भुई आवळा, काळमेघ, द्रोणपुष्पी, गोरखमुंडी, आघाडा, चिरायत, हडसन, हरणखुरी, लाजरी, धमासा, खडकशेपू, नाय, गोखरू, गोजीब, मदनघंटी, चंदनबटवा, खोकली, कपाळफोडी, किडामारी, डोरली, तरवट, दगडीपाला, धोत्रा, कामुनी, उन्हाळी, उंदीरकानी, इत्यादी क्षीरसागर और पाटिल 2008; पाटिल, 2003; जैन, 2007) ।

चरण 3: जमीन तैयार करना!

वृक्षारोपण की प्रक्रिया शुरू करने से पहले, इस परियोजना की संभावनाओं और व्यावहारिकता को निर्धारित करने के लिए जमीन का निरीक्षण अत्यंत आवश्यक है। क्षेत्र की मिट्टी किसी भी मलबे और खरपतवार से साफ होनी चाहिए। मियावाकी पद्धति के तहत, वनीकरण शुरू करने के लिए इसे दिन में कम से कम 8- 9 घंटे की धूप उपलब्ध होनी चाहिए। यह भी सुनिश्चित कर लेना चाहिए कि सिंचाई की सुविधा स्थापित हो । वनीकरण के लिए कम से कम 100 वर्ग मीटर का एक टीला (mound) बनाना चाहिए और बुवाई से पहले उस स्थान को चिन्हित कर लेना चाहिए जहाँ पौधारोपण करना हो।

चरण 4: वृक्षारोपण प्रक्रिया की शुरूआत!

मिट्टी में छोटे-छोटे गड्ढों को खोद कर; जिनकी गहराई लगभग 1 मी. हो; पौधारोपण की प्रक्रिया शुरू की जा सकती है। पौधों को इन गड्ढों में रखना चाहिए और उनके तने के चारों ओर की मिट्टी को हल्का समतल करना चाहिए। इन पौधों के लिए उनकी ऊंचाई के अनुसार उचित सहायक डंडियाँ (sticks) देना भी अत्यंत महत्वपूर्ण है, क्योंकि अभी ये पौधे बहुत नाजुक होते हैं। जैसा की उपर वर्णित है, पौधों के साथ चावल की भूसी, गेहूं की भूसी, या मूंगफली के गोले,नारियल के रेशे और पीट इत्यादि का प्रयोग लाभकारी सिद्ध होता है।

चरण 5: वन की देखभाल!

जंगल की निगरानी में रोजाना पानी देना, खरपतवार और प्लास्टिक की सफाई करना और उचित जल निकासी बनाए रखना शामिल है। वनकर्मियों को मल्च के स्तर को बनाए रखना चाहिए और इसे कम से कम 1 वर्ष के लिए बदलते रहना चाहिए। यह सुनिश्चित करने के लिए कि मल्च इसे ढंक न दे, उन्हें पौधे की वृद्धि पर भी नज़र रखनी चाहिए। जंगल की कटाई नहीं करनी चाहिए, रासायनिक कीटनाशकों और उर्वरकों का उपयोग नहीं करना चाहिए और गिरे हुए पत्तों को साफ करना चाहिए। अधिक से अधिक जैविक खाद व कीटनाशक का प्रयोग किया जाना चाहिए। इस प्रक्रिया में पौधों की वृद्धि 10 गुना अधिक तेजी से होती है, और वनस्पति सामान्य से 30 गुना अधिक सघन पाए जाते हैं। ऐसे जंगल को कम से कम 3 साल तक विशेष देख- भाल की आवश्यकता होती है , उसके बाद यह पारितंत्र आत्मनिर्भर हो जाता है। आमतौर पर जंगलों को पारंपरिक विधि से उगने में कम से कम 100 वर्ष का समय लगता है, जबकि मियावाकी पद्धति से उन्हें केवल 20 से 30 वर्षों में ही उगाया जा सकता है।

मियावाकी तकनीक के लाभ: ऐसे दौर में जबकि विश्व पर्यावरणीय संकट से जूझ रहा है, मियावाकी पद्धति वनीकरण में विशेष रूप से सहायक हो सकती है । इस पद्धति को अपनाने के निम्नलिखित लाभ हमें मिल सकते हैं –

1. मियावाकी पद्धति का सबसे बड़ा लाभ यह है कि यह वनीकरण की एक ऐसी विधि है जो कम समय में सामान्य से अधिक सघन वन बनाने में मदद करती है । आमतौर पर जंगलों को पारंपरिक विधि से उगने में कम से कम 100 वर्ष का समय लगता है, जबकि मियावाकी पद्धति से उन्हें केवल 20 से 30 वर्षों में ही उगाया जा सकता है । इस प्रक्रिया में पौधों की वृद्धि 10 गुना अधिक तेजी से होती है, और वनस्पति सामान्य से 30 गुना अधिक सघन पाए जाते हैं।
2. मियावाकी वन भी उस क्षेत्र में रहने वाली बहुत सी प्रजातियों के आवास के रूप में कार्य करते हैं।
3. मियावाकी पद्धति से तैयार वन हवा, पानी, शोर और मिट्टी के प्रदूषण को नियंत्रित करने में मदद करते हैं।
4. मियावाकी पद्धति से तैयार वन भारी बारिश में मिट्टी की ऊपरी परत को बहने से रोकने का काम करते हैं क्योंकि पेड़ एक दूसरे के करीब लगाए जाते हैं और पेड़ों के जड़ मिट्टी को जकड़ कर रखते हैं । ये पेड़ एक दूसरे को सीधी धूप से बचाते हैं और जंगल में आग लगने की संभावना को भी काफी हद तक कम करते हैं।
5. इस विधि का प्रयोग कर के घरों के आस – पास खाली पड़े स्थान (Backyards) को छोटे बगानों या जंगलों में बदला जा सकता है। यह विधि शहरों के लिए विशेष रूप से लाभकारी सिद्ध हो सकती।

मियावाकी तकनीक के नुकसान

कुछ जानकार मियावाकी पद्धति को संदेह की दृष्टि से देखते हैं और इसे पर्यावरण के लिए सही नहीं मानते। इस सन्दर्भ में निम्नलिखित बिंदु रखे जाते हैं –

1. मियावाकी पद्धति में ज्यादातर इमारती लकड़ी के पेड़ों को प्राथमिकता दी जाती है और पेड़ों के प्रकार का प्राकृतिक वितरण कम हो जाता है। इससे जैव विविधता को खतरा हो सकता है।
2. वनीकरण की यह विधि केवल उप-शहरी या शहरी क्षेत्र में छोटे स्थानों के लिए उपयुक्त है लेकिन उष्णकटिबंधीय क्षेत्रों के लिए नहीं है।
3. एक मियावाकी वन में पेड़ों के बीच जगह की कम उपलब्धता के कारण वन्यजीव प्रजातियों की आवाजाही प्रतिबंधित रहती है।
4. कुछ जानकारों के अनुसार मियावाकी वन की लकड़ियों में प्राकृतिक लकड़ियों की तरह औषधीय गुण नहीं होते।

मियावाकी वन का महत्व

मियावाकी पद्धति के माध्यम से शहरों में खाली पड़ी ऐसी भूमि जिसका कोई अन्य उपयोग नहीं है स्वाभाविक रूप से वनों में बदली जा सकती है। इसे कृषि वानिकी (Agroforestry) या सामुदायिक वानिकी (Community forestry) के तौर पर भी देखा जा सकता है। आज के जलवायु परिवर्तन के दौर में इस तकनीक का महत्त्व और बढ़ जाता है। आज के पर्यावरणीय मुद्दों को हल करने, जैव विविधता और देशी पौधों को संरक्षित करने एवं शहरीकरण के कारण विलुप्त होने की दर को कम करने, वन आवरण का विस्तार करके समग्र रूप से पर्यावरण की गुणवत्ता में वृद्धि करने और प्राकृतिक आपदाओं के खिलाफ पेड़ों को बफर के रूप में उपयोग करने के लिए यह तकनीक काफी मददगार सिद्ध हो सकती है। भारत ने भी इस तकनीक के महत्त्व को समझते हुए तेलंगाना में वनस्पति को बढ़ाने के लिए इस जापानी वनीकरण पद्धति की शुरुआत की थी। इसे "तेलंगानाकु हरिता हरम" (Telanganaku Haritha Haaram) कहा गया। मियावाकी विधि उद्योग या निर्माण जैसे अन्य उद्देश्यों के लिए उपयोग की जाने वाली अवक्रमित भूमि पर शीघ्रता से वन- आवरण बनाने के लिए सबसे प्रभावी वृक्षारोपण विधियों में से एक है। मियावाकी तकनीक विश्व में सह -अस्तित्व का एक नया विकल्प है जिसमें शहरी क्षेत्र और वन वातावरण सह- अस्तित्व में हो सकते हैं। जापान में इस तकनीक का प्रभावी ढंग से उपयोग कर के शहरों के बीच जंगलों के छोटे- छोटे समूह का निर्माण किया गया है। यह शहरी वानिकी परियोजनाओं और मनोरंजक पार्कों के विकास में भी एक उपयोगी उपकरण साबित हो सकता है। इस क्षेत्र को शहरों और कस्बों में वन्यजीव के लिए एक अभयारण्य के रूप में भी परिवर्तित किया जा सकता है। आजकल तो इनके व्यवसायिक उपयोग की भी अनन्य संभावना है।

सफलता की कहानी

2017 में, पानी फाउंडेशन ने पहली बार सतारा जिले में न्हावी बु. इस गांव में मियावाकी जंगल को आजमाने का फैसला किया। SayTrees संस्था और ग्रामीणों की मदद से, मियावाकी तकनीक का उपयोग करके 33 प्रकार की देशी प्रजातियों के 2000 पौधे लगाए। स्थानीय जलवायु परिस्थितियों के प्रति अधिकतम प्रतिरोध सुनिश्चित करने के लिए, और इस प्रकार अधिकतम अस्तित्व सुनिश्चित करने के लिए, केवल स्थानीय किस्मों को रोपण के लिए चुना गया था। सभी पौधे श्रमदान

(स्वैच्छिक शारीरिक श्रम) के माध्यम से लगाए गए थे, और 2 वर्षों तक, जंगल की सावधानीपूर्वक देखभाल की गई थी। अब, यह जंगल तीन साल पुराना है (सितंबर 2020 तक), और यहाँ अक्सर पक्षी, मधुमक्खियाँ, कीड़े और तितलियाँ आती हैं।

निष्कर्ष

मियावाकी तकनीक वनों की कटाई से नष्ट हुए पेड़ों को पुनः बहाल करने में भी मददगार साबित हो सकती है। स्थानीय जैव विविधता को बनाए रखने और पर्यावरणीय स्वास्थ्य को नियंत्रित करने के लिए वन महत्वपूर्ण हैं। जैसा की ऊपर वर्णित है, वे मृदा अपरदन को भी कम कर सकते हैं और पानी तथा हवा के बल को भी नियंत्रित कर सकते हैं। मियावाकी पद्धति से तैयार वन भारी बारिश में मृदा संरक्षण का काम करते हैं क्योंकि पेड़ एक दूसरे के करीब लगाए जाते हैं। मियावाकी जंगल में पौधे बहुत अधिक घनत्व में लगाए जाते हैं। यह प्राकृतिक जंगल में होने वाली पुनर्जनन प्रक्रिया को दोहराता है। प्रकाश के लिए प्रतिस्पर्धा करने के लिए पौधे बहुत तेजी से बढ़ते हैं और इससे एक घने 'कैनोपी'/ छतरी का निर्माण होता है। वन की कार्बन प्रच्छादन क्षमता या जैव विविधता और वन्य जीवन के लिए निवास स्थान बनाना- सभी दृष्टि से यह महत्व रखता है।

सन्दर्भ सूची:

1. क्षीरसागर एस आर और पाटिल डी ए (2008) जलगांव जिले की वनस्पति (महाराष्ट्र) बिशन सिंह महेंद्र सिंह पाल देहरादून।
2. पाटिल डी ए (2003) फ्लोरा ऑफ़ धुले नंदुरबार डिस्ट्रिक्ट (महाराष्ट्र) बिशन सिंह महेंद्र पाल सिंह देहरादून।
3. जैन एस.के. (2007) डिक्शनरी ऑफ इंडियन फोक मेडिसिन एंड एथ्नोबोटनी। डीप पब्लिकेशन्स, नई दिल्ली।
4. https://byjus.com/ias-hindi
5. /miyawaki-method-in-hindi/
6. https://www.youtube.com/watch?v=uvaAfV-lhWM